अध्याय 19

कला एवं स्थापत्य

पिछली कक्षा में आपने पढ़ा कि प्रारम्भिक मानव ने दीवारों पर लाल रंग से शिकार के चित्र बनाए। धीरे धीरे पक्के बर्तनों पर पशु–पक्षी अथवा मनुष्यों के चित्र बनाए। हम भी रंगों से दीवार, कागज, कपड़े आदि पर चित्र बनाते हैं। इन सबके बारे में हम इस अध्याय में पढ़ेंगे।

यह वह समय था जब देश में चित्रकला और स्थापत्य कला ने बहुत प्रगति की, इसके अनेक नमूने आज भी हमारे सामने हैं और आज भी उस परम्परा को कलाकार आगे बढ़ा रहे हैं।

चित्र शैली से तात्पर्य चित्र बनाने के एक विशेष प्रकार के तरीके से है।

मध्ययुगीन चित्र शैली

मध्ययुगीन चित्रकला शैली के दो प्रधान केन्द्र रहे हैं। पहला पश्चिमी भारत का क्षेत्र व दूसरा उत्तरी–पूर्वी भारत का क्षेत्र। पश्चिमी भारत के क्षेत्र का केन्द्र गुजरात व राजस्थान बना। उत्तरी–पूर्वी शैली का केन्द्र बना बंगाल और बिहार। दोनों केन्द्रों के विषय जैन व बौद्ध कथाओं पर आधारित थे। इसे पाल शैली कहते है। इनके आकार–प्रकार व स्वरूप में साम्यता थी। यह चित्र ताड़ पत्र व कागज पर बनाए जाते थे। इन्हें पोथी चित्र भी कहा जाता था। इस शैली की पहचान है, गरुड़ की सी आगे निकली हुई नाक, पतली आँखें, छोटी ठुड्डी, ऐंठी अंगुलियाँ, पतली कमर इत्यादि।

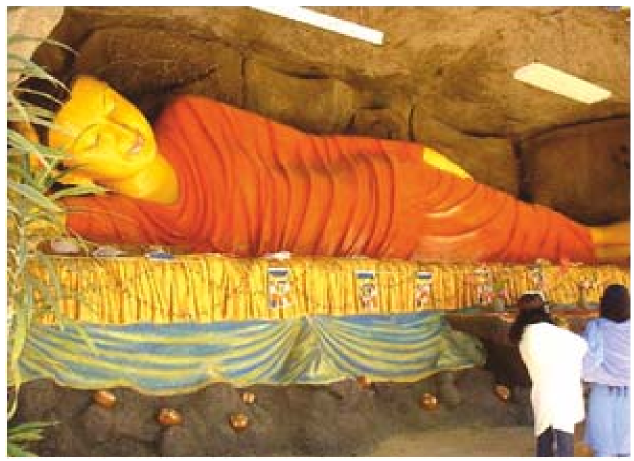

बुद्ध महापरिनिर्वाण–पाल शैली
(उत्तरी–पूर्वी भारत)

इन चित्रों में लाल, नीले व पीले रंगों का प्रयोग किया जाता था। इनकी रेखाओं की एक जैसी मोटाई होती थी। पश्चिमी भारतीय शैली से राजस्थानी चित्रकला की उत्पत्ति मानी जाती है।

सल्तनत कालीन स्थापत्य

दिल्ली में मुस्लिम सल्तनत की स्थापना के साथ ही नए स्थापत्य ने जन्म लिया। पश्चिम एशिया के प्रभाव से अब हिन्दुस्तान में भी मस्जिदें बनने लगी। शायद इस्लामिक शैली वाला देश का सबसे पहला भवन समूह दिल्ली के पास महरौली में बना। यहाँ कुव्वत–उल–इस्लाम मस्जिद के समीप ही दुनिया की मशहूर कुतुब मीनार है।

कुव्वत–उल इस्लाम और कुतुबमीनार

मुगल कालीन स्थापत्य

दिल्ली सल्तनत के बाद मुगल आए। मुगलों के पास बड़ी–बड़ी इमारतें बनाने के लिए अपार धन था। उन्होंने मस्जिदों के अलावा कई भव्य मकबरे भी बनाए। इन मकबरों में मध्य और पश्चिम एशिया की स्थापत्य कला का काफी असर था। दिल्ली में हुमायूँ का मकबरा और आगरा में ताजमहल मुगल स्थापत्य के अभूतपूर्व नमूने हैं।

हुमायूँ का मकबरा–दिल्ली

ताजमहल–आगरा

शाहजहाँ द्वारा निर्मित दिल्ली का लाल किला मुख्यतः रिहायशी किला था, सामरिक महत्त्व का नहीं। वहीं आगरा में बना लाल किला सामरिक महत्त्व का भी था। इस किले को यूनेस्को (UNESCO) ने 'वैश्विक विरासत' घोषित किया है।

दिल्ली के लाल किले को हिन्दुस्तान में राज्य सत्ता का द्योतक माना गया है। इसका उदाहरण तब मिलता है जब सुभाषचन्द्र बोस ने आजाद हिन्द फौज के सैनिकों को प्रेरित करते हुए लाल किले की प्राचीर पर तिरंगा फहराने की बात कही थी। आजाद हिन्द फौज के सेनानियों पर मुकदमा भी अंग्रेज सरकार ने लाल किले पर ही चलाया था। मुगल स्थापत्य ने राजस्थान में भी स्थापत्य कला पर असर डाला। अब राजस्थान की इमारतों में भी छज्जें, छतरी और झरोखे बनाए जाने लगे।

लाल किला–दिल्ली

राजस्थान की स्थापत्य कला

राजस्थानी स्थापत्य कला क्या थी? इसे समझने के लिए पहले कुछ पिछला याद करते हैं। मनुष्य को गुफाओं से निकल कर सुरक्षित आवास की आवश्यकता हुई तो उसने बाँस और घास–फूस से झोंपड़ी का निर्माण किया। निर्माण की इसी प्रक्रिया में पत्थरों व पक्की ईंटों का उपयोग करने लगा।

मनुष्य जब एक समूह में निवास करने लगा तो पशु–पालन और कृषि करना आरम्भ किया। आस–पास के जंगली जानवरों से रक्षा करने हेतु एक परकोटे का निर्माण किया।

भारत में सिंधु सभ्यता के उत्खनन से और राजस्थान में कालीबंगा (हनुमानगढ़) और आहाड़

सभ्यता के उत्खनन से सुनिश्चित आवास की एक नगरीय सभ्यता के अवशेष प्राप्त हुए हैं।

ऐसा माना जाता है कि सिंधु–सरस्वती सभ्यता से ही ईंटों के भवन बनाने की परम्परा आरम्भ हुई थी, जिसका निरंतर विकास होता रहा। मौर्य युग में लकड़ी से निर्मित भवनों व राजमहलों के निर्माण का विवरण मिलता है। पाटलिपुत्र के भव्य महलों का उल्लेख यूनानी दूत मेगस्थनीज ने भी किया है।

इमारतों का इस्तेमाल सुरक्षा के लिए तो होता ही है, इनका इस्तेमाल सांकेतिक तौर पर लोगों के साथ संवाद करने के लिए भी होता है। तभी तो अनेक इमारतें इतनी खूबसूरत और महंगी भी बनाई जाती थी ताकि यह जाहिर हो सके कि इमारत में रहने वाला तथा उसे बनवाने वाला कितना महान् व्यक्ति था।

समय के साथ–साथ स्थापत्य के स्वरूप में भी परिवर्तन आया, जिन्हें हम निम्न रूप में देख सकते हैं–

(1) नगरीय स्थापत्य (2) दुर्ग निर्माण (3) स्तूप
(4) मंदिर (5) पुर अथवा नगर (6) ग्रामीण स्थापत्य

राजस्थान के दुर्ग

दुर्ग से अर्थ – वह क्षेत्र अथवा स्थान जिसके चारों ओर प्राचीर या परकोटा बना हो। अधिकांश दुर्ग सामरिक दृष्टि से और सुरक्षा के लिए बनाए जाते थे। सुरक्षा की दृष्टि से दुर्ग ऊँची पहाड़ियों पर, गहरी नदियों के किनारे अथवा मैदानी क्षेत्रों में बनाए जाते थे।

जहाँ तक संभव हो, दुर्ग के आसपास एक या अनेक गहरी खाइयाँ भी बनाई जाती थी, जिनमें पानी भर कर दुश्मन को रोका जा सकता था। मुख्यतः महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश और राजस्थान जैसे पर्वतीय क्षेत्रों में सामरिक दृष्टि से दुर्ग बनाने की प्राचीन परम्परा दिखाई देती है।

राजस्थान में स्थित प्रमुख दुर्गों की एक सूची– (कोष्ठक में जिले दिखाए गए हैं)

चित्तौड़गढ़ (चित्तौड़)	मेहरानगढ़ (जोधपुर)
कुम्भलगढ़ (राजसमन्द)	सोनारगढ़ (जैसलमेर)
जालोर–दुर्ग (जालोर)	गागरोन (झालावाड़)
रणथम्भौर (सवाई माधोपुर)	जूनागढ़ (बीकानेर)
तारागढ (बून्दी)	आमेर (जयपुर) इत्यादि।

गतिविधि–

राजस्थान में इनके अलावा और भी दुर्ग हैं, उनके बारे में जानकारी इकट्ठी करके लिखिए। चित्रों का संग्रह कीजिए।

ये दुर्ग न केवल सामरिक दृष्टि से वरन् शासकों के आवास, सेना और सामान्य लोगों के रहने के लिए भी उपयुक्त थे। इसमें खाद्य भण्डारण, कुंड, जलाशय आदि आवश्यक सुविधाएँ होती थी। दुर्ग में इतनी व्यवस्था होती थी कि कई महीने बिना परेशानी, बिना किसी समस्या के दुर्ग के अंदर लोग जब तक रह सकते थे, जब तक कि सेना दुश्मन को न हरा दे।

मैदानी क्षेत्रों में निर्मित दुर्गों की संरचना अलग ढंग की होती थी। मैदानी दुर्गों में भी पूर्ववत् विशेषताएँ तो रहती थीं, किन्तु ऐसे दुर्गों के चारों ओर चौड़ी खाइयाँ बनाई जाती थी, जिन्हें नदी अथवा तालाब से जोड़ा जाता था। इनमें संकड़े मार्ग भी बने होते थे। 'दुर्ग' शब्द के पर्याय में किला, गढ़ इत्यादि शब्दों का प्रयोग इतिहासकारों ने किया है, किन्तु राजस्थान के इतिहास में लोक भाषा में 'दुर्ग' के प्रर्याय रूप में 'किला' शब्द ही प्रयोग में लिया जाता रहा है। जैसे चित्तौड़ का किला, रणथम्भौर का किला, जालोर का किला, आमेर (जयपुर) का किला इत्यादि।

तारागढ़–अरावली पहाड़ी के उत्तर भाग में हाड़ा शासकों के कलात्मक महल बने हुए हैं। इन महलों को तारागढ़ दुर्ग के नाम से जाना जाता है। इस दुर्ग का निर्माण 1354 ई. में राव बरसिंह ने करवाया था। दुर्ग के चारों ओर दृढ़ दीवार का निर्माण किया गया है। बूंदी दुर्ग का स्थापत्य राजपूत व मुगल कला के समन्वय का सुन्दर उदाहरण है।

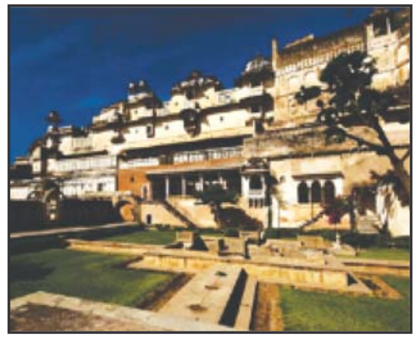

बून्दी दुर्ग

चित्रशाला–बून्दी

दुर्ग के छत्रशाल महल तथा यंत्रशाला को सुन्दर भित्ति चित्रों से सजाया गया है, वहीं बादल महल व अनिरुद्ध महल की चित्रशाला में चित्रित भिति चित्र राजस्थान की भिति चित्र परम्परा के सुन्दर उदाहरण है। भवनों की शानदार छतरियाँ व दरबार हॉल के अलंकृत स्तंभ स्थापत्य कला के अद्‌भुत उदाहरण है। बूंदी दुर्ग को समय–समय पर दिल्ली सल्तनत व मुगल बादशाहों द्वारा आक्रमण कर इसे क्षति पहुँचाई गई, किन्तु हाड़ा राजाओं ने हमेशा कड़ा प्रतिरोध कर इसकी रक्षा की।

रणथम्भौर–शिव पिंड पर रखे बिल्वपत्र की भाँति पहाड़ी श्रृंखलाओं में खोया हुआ रणथम्भौर देश का प्रसिद्ध दुर्ग है। यह दुर्ग उस अन्तर्यामी शिव की तरह है जो सब कुछ देखता है, पर स्वयं दिखाई नहीं पड़ता है। ऐसा अभेद्य और दुर्गम दुर्ग कदाचित् देश में दूसरा नहीं है।

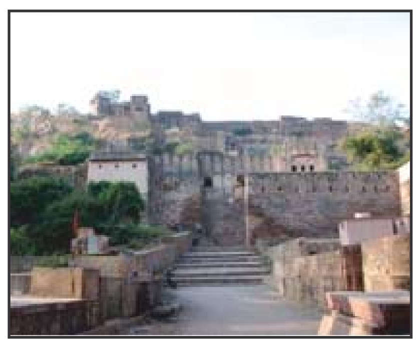

रणथम्भौर दुर्ग

एक ऊँची पहाड़ी के शिखर पर रणथम्भौर का अभेद्य दुर्ग स्थित है। दुर्ग का नाम 'रणथम्भ पुर' है। किले के निर्माण की निश्चित तिथि ज्ञात नहीं है, परन्तु ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि इस दुर्ग का निर्माण चौहान वंशी राजाओं ने करवाया, जिन्होंने 600 वर्षों तक इस क्षेत्र पर एकछत्र राज्य किया।

वर्तमान में यह दुर्ग व इसके आसपास का सघन वन क्षेत्र 'रणथम्भौर बाघ परियोजना' के अन्तर्गत आ गया, जिससे इसके जीर्णोद्धार व संरक्षण का कार्य प्रगति पर है।

जालोर दुर्ग–पश्चिम राजस्थान में सोनगरा चौहानों के अतुल शौर्य के लिए प्रसिद्ध 'जालोर दुर्ग' देश में अपनी प्राचीनता व सुदृढ़ता के लिए प्रसिद्ध है। वर्तमान गुजरात और राजस्थान सीमावर्ती पहाड़ी पर व्यापारिक सामरिक महत्व का क्षेत्र होने के कारण यह निरन्तर हमलावरों का केन्द्र रहा है।

जालोर दुर्ग

पश्चिमी अरावली श्रृंखला की सोनगिरि पहाड़ी पर समुद्रतल से 2408 फीट की ऊँचाई पर प्रसिद्ध जालोर का दुर्ग अभिमान से खड़ा है। पहाड़ी के शीर्ष पर 800 गज लम्बा और 400 गज चौड़ा समतल मैदान है। तीन दरवाजों को पार कर चौथे मुख्य द्वार से प्रवेश किया जाता है। इस दुर्ग का निर्माण परमार राजाओं धारावर्ष और मुंज ने 10 वीं सदी में करवाया था। दुर्ग में कई हिन्दु व जैन देवालय तथा बुर्ज आदि बनाए गए हैं। दुर्ग पर मुस्लिम पीर मलिक शाह की मस्जिद है। दुर्ग में अतुलित जल भण्डार के कुएँ, कुंड आदि बनाए गए हैं।

जालोर दुर्ग पर लगभग 13 वीं सदी तक परमार राजाओं का अधिकार था। यह दुर्ग प्राचीरों के कुछ भाग को छोड़कर अब भी अच्छी स्थिति में है।

चित्तौड़गढ़–मेवाड़ की राजनीति का केन्द्र चित्तौड़गढ़ उदयपुर दिल्ली मार्ग पर उदयपुर से 120 कि. मी उत्तर–पूर्व में स्थित है। इस किले का निर्माण मौर्य वंशी शासक चित्रांगद मौर्य द्वारा 7 वीं सदी में करवाया गया। तदनन्तर प्रतिहार, परमार और सिसोदिया शासकों द्वारा भी इसके निर्माण में अभिवृद्धि की गई।

चित्तौड़ दुर्ग

चित्तौड़ का किला मेसा की पठार पर स्थित है जो एक सुदृढ़ प्राचीर से घिरा हुआ है। इसमें राजमहल, कलात्मक मंदिर, जलाशय आदि निर्मित हैं। मेवाड़ के महाराणा कुम्भा द्वारा गढ़ में कई स्थलों का जीर्णोद्धार करवाया गया। यहाँ अनेक भवन, मन्दिर, स्तम्भ आदि बनवाए, जो भारतीय स्थापत्य कला का सुन्दर उदाहरण है। महाराणा कुम्भा ने अपने राज्य काल में लगभग 32 नए किलों का निर्माण करवाया जो कि कुम्भा कालीन भारतीय स्थापत्य का अद्भुत उदाहरण हैं।

विजय स्तम्भ– चित्तौड़गढ़ के अत्यन्त प्राचीन तीर्थ स्थल गौमुख कुण्ड के उत्तर–पूर्वी कोण पर कुम्भा द्वारा निर्मित 'विजय स्तंभ' 47 फीट वर्गाकार और 10 फीट ऊँची जगती (चबूतरा) पर बना हुआ है। यह 122 फीट ऊँचा नौ मंजिला स्मारक अपनी कारीगरी का सुन्दर उदाहरण है। इस स्तम्भ पर प्रतिमाएँ उत्कीर्ण हैं। इसे 'भारतीय मूर्तिकला का शब्दकोश' कहना उचित होगा।

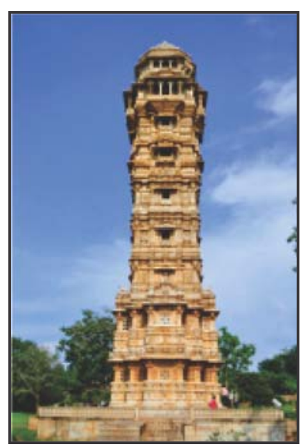
विजय स्तम्भ

पुराविद् श्री आर.सी. अग्रवाल ने विजय स्तंभ के शिल्पियों के नामों की सूची प्रकाशित की है। इनमें शिल्पी जइता तथा उसके पुत्रों नापा, पोमा, पूजा, भूमि, चुथी, बलराज आदि का वर्णन मिलता है। इस स्तंभ का निर्माण सन् 1440 में प्रारंभ होकर सन् 1448 में पूर्ण हुआ। राजस्थान में अन्य किलों यथा आमेर, बूंदी, बीकानेर, जोधपुर के किलों पर मुगल स्थापत्य कला का प्रभाव, बुर्ज, झरोखे, छतरियाँ, महराब आदि के रूप में दिखाई देता है।

स्थापत्यविद् पर्सी ब्राउन की मान्यता है कि मुस्लिम कारीगरों ने भारतीय स्थापत्य के पारम्परिक आकारों व स्थानीय रूपों को मिलाकर आवश्यकतानुरूप संशोधन कर एक विशिष्ट स्थापत्य शैली का निर्माण किया, जिसे 'इण्डो – इस्लामिक शैली' नाम दिया गया।

राजस्थान की चित्रकला

राजस्थान चित्र शैली के प्राचीन ऐसे सचित्र ग्रंथ सामने आए हैं जिसमें राजस्थानी चित्र शैली का आरंभिक स्वरूप निखरता दिखाई देता है।

इन ग्रंथ–चित्रों में 'लौरचन्द्रा', 'मृगावती', गीत गोविन्द,' चोर पंचाशिका', 'नायक नायिका भेद,' चावण्ड रागमाला आदि ग्रंथों में राजस्थानी शैली का परिष्कृत रूप निखरने लगा। रसिक प्रिया, रामायण, भागवत् पुराण चित्रों में यह मौलिक रूप में दिखाई देती है। चोर पंचाशिका व चावण्ड रागमाला ग्रंथों को कला इतिहासज्ञों ने राजस्थानी चित्रकला शैली के आरंभिक ग्रंथ चित्र माने हैं, जिसका समय लगभग 16 वीं शताब्दी पूर्वार्द्ध माना गया है।

राजस्थान में चित्र निर्माण की प्रमुख शैलियां निम्न हैं–
1. मेवाड़ शैली – उदयपुर, नाथद्वारा, देवगढ, चावण्ड
2. मारवाड़ शैली – सिरोही, जोधपुर, बीकानेर, जैसलमेर
3. हाड़ौती शैली – बूंदी, कोटा, झालावाड़
4. ढूँढ़ाड़ शैली – जयपुर, अलवर, उनियारा, शेखावाटी
   किशनगढ़ शैली – अजमेर, किशनगढ़

बणी–ठणी (किशनगढ़)

भारत में मुगल साम्राज्य के पतन के साथ ही मुगल चित्रकार राजसी संरक्षण हेतु इधर–उधर राज्यों की ओर चले गए, जिससे मुगल काल की दरबारी चित्रकला शैली का प्रभाव कांगड़ा, राजस्थान, बंगाल, बिहार और तंजौर व गोलकुण्ड़ा की कला पर दिखाई देता है। मुगल चित्रकारों ने वहाँ जाकर स्थानीय कलाकारों और चित्र परम्परा के साथ काम कर एक नई शैली को जन्म दिया, जो स्थानीय विशेषताओं के कारण स्वतंत्र शैली के रूप में विकसित हुई। कुछ चित्रकार राजपूताना की रियासतों मेवाड़, मारवाड़, हाड़ौती, शेखावटी क्षेत्रों में गए जहाँ स्थानीय शासकों के संरक्षण में कार्य करते हुए उन्होंने आकारों की मौलिकता को बनाए रखा। परिणामस्वरूप अलग–अलग क्षेत्रीय शैलियाँ विकसित हुईं, किन्तु चित्रों की सामान्य विशेषताएँ, रंग, विषय वस्तु आदि में परिवर्तन होने से रायकृष्ण दास ने राजपूताना राज्य में पल्लवित चित्रकला को 'राजस्थानी चित्र–शैली' का नाम दिया, जिसे सभी विद्वानों ने स्वीकार किया है। राजस्थानी चित्रों की विषय वस्तु मुख्य रूप से धार्मिक कथाओं पर आधारित रही है। 17 वीं सदी का युग राजस्थानी चित्रकला का स्वर्णिम काल माना है।

राजस्थान के मन्दिर

स्तूप और मंदिरों के बारे में आपने पिछली कक्षा में पढ़ा था। मंदिरों का विकास गुप्तकाल से माना जाता है। ऐसा मानना है कि भारतवर्ष में शिखर मंदिरों के निर्माण का प्रारंभ उत्तर गुप्त काल में हुआ, जिनका विकास गुर्जर–प्रतिहार, गुहिल, चन्देल, राठौड़, परमार, सोलंकी, चालुक्य व पाल शासकों के काल में होता रहा।

मंदिर शब्द से तात्पर्य है, वह स्थान जहाँ हम अपने आराध्य देवी– देवता की पूजा करते हैं। मंदिर का तलछन्द / भूमि तल विस्तार (ग्राउण्ड प्लान) मुख्यतः– 1. प्रवेश मण्डप 2. सभा मण्डप और 3. गर्भगृह में विभाजित होता है। इसकी जानकारी के लिए साथ में दिए गए चित्र को देखें। इसका ऊर्ध्व विस्तार (एलीवेशन) पीठ, मण्डोवर, शिखर आदि में विभाजित होता है। गुप्तोत्तर युग से आज तक मंदिर बनाने की यही शास्त्रीय परम्परा रही है, जिनके निर्माण में शिल्प शास्त्र के नियमों का अनुसरण किया जाता है। राजस्थान में मध्यकाल में कई महत्वपूर्ण मंदिरों का निर्माण हुआ है। कई तो आपने स्वयं भी देखे होंगे।

मंदिर के भागों के नाम

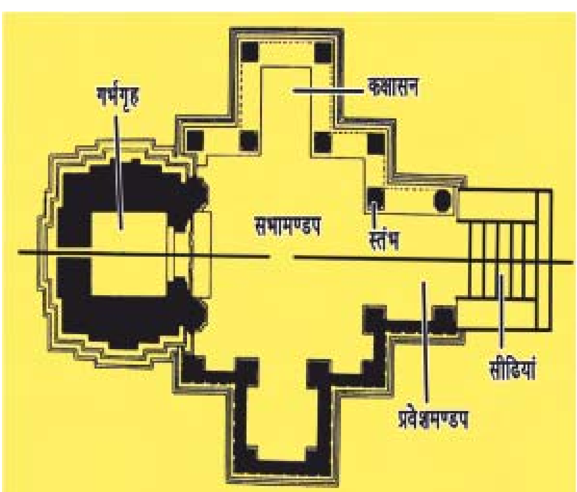

मन्दिर का तलछन्द विन्यास

रणकपुर जैन मंदिर (पाली)

यहाँ राजस्थान के कुछ प्रमुख मंदिरों की सूची दी जा रही है। यथा–

मेवाड़ क्षेत्र के प्रमुख मंदिर– जगदीश मंदिर (उदयपुर) सास–बहु मंदिर (नागदा–उदयपुर), अम्बिका मंदिर (जगत–उदयपुर), श्री नाथजी का मंदिर (राजसमन्द), श्री एकलिंगनाथ मंदिर (उदयपुर), ऋषभदेव मन्दिर (उदयपुर) जैन मन्दिर आदि।

मारवाड़ क्षेत्र के प्रमुख मंदिर– देलवाड़ा का जैन मन्दिर (आबू पर्वत– सिरोही), रणकपुर का जैन मंदिर (पाली), किराड़ू के मंदिर (बाड़मेर), ओसिया के मंदिर (जोधपुर), जैसलमेर के जैन मंदिर आदि।

जैन मन्दिर रणकपुर (पाली)–हाड़ौती क्षेत्र के प्रमुख मंदिर– बाड़ोली (रावतभाटा), भण्डदेवरा (बांरा), कमलेश्वर महादेव (बूंदी), झालरापाटन (झालावाड़) आदि।

शेखावटी–जयपुर क्षेत्र के प्रमुख मंदिर–आभानेरी मंदिर (दौसा), खाटूश्याम जी (सीकर), गोविन्द देव जी का मंदिर जयपुर आदि।

बाड़ोली के मन्दिर

मंदिर बनते कैसे थे ? कौन इन्हें बनाने के लिए पूँजी देता था ? ये किस उद्देश्य से बनते थे ? आइए अब इसकी जानकारी प्राप्त करें–

इन मंदिरों का निर्माण महाराजाओं, रानियों, जागीरदारों और श्रेष्ठि संघो द्वारा समय समय पर करवाया जाता था। कभी–कभी मंदिर बनाने वाला अपना बड़प्पन भी दिखाना चाहता था। मंदिरों की देख–रेख के लिए स्थानीय शासकों द्वारा व्यवस्था की जाती थी। सरकार द्वारा सुरक्षित देवालयों की पूजा–अर्चना का दायित्व वर्तमान में 'देवस्थान विभाग' द्वारा किया जाता है।

राजस्थान की मूर्तिकला

गुप्तकालीन भारतीय मूर्तिकला के आदर्श तत्वों ने कला को नया रूप प्रदान किया। गुप्त युगीन

मूर्तिकला परम्परा के प्रभावों से राजस्थान प्रभावित रहा है।

इस समय राजस्थान में वैष्णव, शैव, शाक्त आदि धर्मों के प्रसार के साथ–साथ जैन धर्म को भी राजकीय संरक्षण प्राप्त था। इसलिए राजस्थान में उपर्युक्त धर्मों के देवी–देवताओं के देवालय एवं प्रतिमाओं का पर्याप्त मात्रा में निर्माण किया गया।

राजस्थान में मूर्तियों से अलंकृत देवालयों का निर्माण गुर्जर–प्रतिहार, परमार, चौहान, गुहिल शासकों के सरंक्षण में हुआ है, किन्तु प्रतिहारों का योगदान सर्वाधिक रहा है।

शैव धर्म की प्राचीन परम्परा में शिव के लिंग–विग्रह और मानवीय प्रतिमाएँ पर्याप्त मात्रा में निर्मित हुई हैं। इन प्रतिमाओं में महेश मूर्ति, अर्द्धनारीश्वर, उमा–महेश्वर, हरिहर व अनुग्रह मूर्तियों को पर्याप्त उत्कीर्ण किया गया है। इन सभी प्रतिमाओं का सौन्दर्य अनुपम है।

महिषासुर मर्दिनी (जगत–उदयपुर)

महिषासुर मर्दिनी (ओसियाँ–जोधपुर)

त्रिविक्रम, नागदा–उदयपुर

वैष्णव धर्म का प्रसार राजस्थान में ईसा–पूर्व प्रथम–द्वितीय सदी में नगरी के अभिलेखीय विवरण से मिलता है। वैष्णव प्रतिमाओं में दशावतार प्रतिमाएँ, लक्ष्मीनारायण, गजलक्ष्मी, गरुड़ासीन विष्णु आदि की प्रतिमाओं में वैकुण्ठ, अनन्त त्रैलोक्य मोहन इत्यादि पर्याप्त रूप में उत्कीर्ण की गई हैं।

पूर्व मध्यकाल में शाक्त मत का व्यापक प्रसार था। परिणामस्वरूप कई शाक्त देवालयों का निर्माण हुआ। इन देवालयों में ''महिषासुर मर्दिनी' की प्रतिमाओं की प्रधानता है।

शेषशायी विष्णु –बाड़ोली

नटराज–बाडोली

सूर्यमत का प्रभाव 8–9 वीं सदी से देखा जा सकता है। औसियाँ, वरमाण (सिरोही),झालरापाटन, चित्तौड़गढ़, उदयपुर में आज भी सूर्य मन्दिर स्थित हैं। सिरोही क्षेत्र में बसन्तगढ़ और आहाड़ क्षेत्र से प्राप्त धातु की जैन प्रतिमाएँ इसके प्राचीनतम उदाहरण है। मीरपुर, आबू, देलवाड़ा जैन मंदिर, रणकपुर, चित्तौड़गढ़, ओसियाँ में जिनालयों के निर्माण की परम्परा इसके सुन्दर उदाहरण हैं।

चतुर्मुखी शिवलिंग (कल्याणपुर)

इस युग की हिन्दू व जैन प्रतिमाओं के निर्माण में भारतीय प्रतिमा विज्ञान के नियमों का अनुसरण किया गया है। प्रतिमाओं में आभूषण, परिधान व केश–विन्यास एवं विभिन्न मुद्राओं में उत्कीर्ण प्रतिमाएँ इस युग की मूर्तिकला की प्रधान विशेषताएँ हैं।

गतिविधि–
राजस्थान के मन्दिरों या अन्य स्थानों पर स्थापित मूर्तियों के चित्रों का संग्रह कीजिए तथा इनके चित्र भी बनाने का प्रयास कीजिए।

हवेलियाँ

राजस्थान में हवेलियों के निर्माण की स्थापत्य कला भारतीय वास्तुकला के अनुसार रही है। जयपुर की हवेली परम्परा इतनी प्रसिद्ध हुई कि बाद की समृद्धि के साथ ही शेखावटी के श्रेष्ठों ने अपने–अपने गाँव में विशाल हवेलियाँ बनवाने की परम्परा ही डाल दी। रामगढ़, नवलगढ़, मुकुन्दगढ़ की विशाल हवेलियाँ, हवेली–शैली स्थापत्य के उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

पटवों की हवेली (जैसलमेर)

जैसलमेर की सालमसिंह की हवेली, नथमल की हवेली तथा पटवों की हवेली तो पत्थर की जाली एवं कटाई के कारण संसार में प्रसिद्ध है।

करौली, भरतपुर, कोटा की हवेलियाँ भी अपने कलात्मक कार्यों के कारण बेजोड़ गिनी जाती हैं।

छतरियाँ

राजस्थान में राजाओं का राज्य रहा एवं यहाँ का श्रेष्ठि–वर्ग सम्पन्न रहा, अतः मरणोपरान्त उनकी याद में स्थापत्य की दृष्टि से विशिष्ट स्मारक बनाए गये, जिन्हें छतरियों और देवल के नाम से जाना जाता है।

बूँदी की चौरासी खम्भों की छतरी

अलवर में मूसी महारानी की छतरी, करौली में गोपालसिंह की छतरी, बूँदी में चौरासी खम्भों की छतरी, रामगढ़ में सेठों की छतरी, गेटोर में ईश्वर सिंह की छतरी, जोधपुर में

जसवन्त सिंह का थड़ा, उदयपुर में आयड़ की छतरियाँ, जैसलमेर में बड़ा बाग की छतरियों का स्थापत्य सौन्दर्य देखते ही बनता हैं।

शेखावटी की छतरियाँ

शेखावटी की छतरियों में चित्रित मानव जीवन के विविध दृश्य अतीव आकर्षक हैं। राजाओं पर बने स्मारक भी इस क्षेत्र में संख्या में अधिक हैं। सीकर के शासकों देवीसिंह और लक्ष्मणसिंह पर विशाल छतरियाँ सीकर में बनी हुई हैं। माधोसिंह, कल्याण सिंह और हरदयाल सिंह की छतरियों की सादगी, विशालता, उन्नत अधिष्ठान आदि इनके मूलभूत तत्व है। शेखावटी की छतरियाँ शेखावत काल के वीरों का मुँह बोलता इतिहास है।

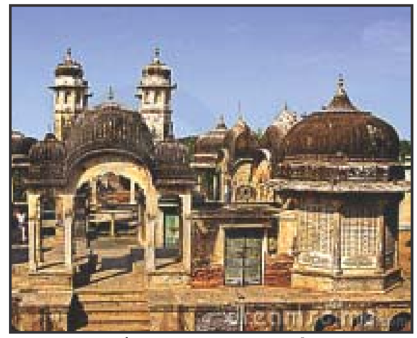

शेखावटी छतरियाँ

रामगढ़ शेखावटी धनाढ्य सेठों की नगरी कहलाती है। सेठ देश–विदेशों में व्यापार से संचित अपार धन का सदुपयोग बड़ी–बड़ी आलीशान हवेलियों के बनवाने में करते थे।

रामगोपाल पोद्दार की छतरी शेखावटी संभाग की सबसे बड़ी छतरी मानी जाती है।

अलवर की छतरियाँ

अलवर के नैड़ा अंचल की छतरियों में कला और शिल्प का अनूठा संसार चित्रित है। ये भित्ति चित्रण की तात्कालीन दक्षता के साथ शिल्पकला के वैशिष्ट्य को भी दर्शाती है।

अलवर की छतरियाँ

मंडोर की छतरियाँ

लम्बे समय तक मारवाड़ की राजधानी रहे मंडोर में, स्थापत्य कला की नक्काशी से युक्त विशाल देवल व पास ही बने पंचकुंडा में भव्य छतरियाँ भी हैं, जो मंडोर के नैसर्गिक सौन्दर्य में चार चाँद लगाती है।

मंडोर में देवलों के नाम से विख्यात स्मृति स्मारक है, जिनमें राम मालदेव से लेकर तख्तसिंह तक के मारवाड़ के शासकों के विख्यात स्मारक है। ये स्मारक लाल घाटू के पत्थरों से निर्मित हैं, जिन पर पाषाण के शिल्पियों की सुन्दर तक्षण कला स्पष्ट तौर पर देखी जा सकती है। विशालकाय देवलों में महाराजा जसवन्तसिंह, अजीतसिंह व तख्तसिंह के देवल तो यहाँ की विशेष निधि बन गए है।

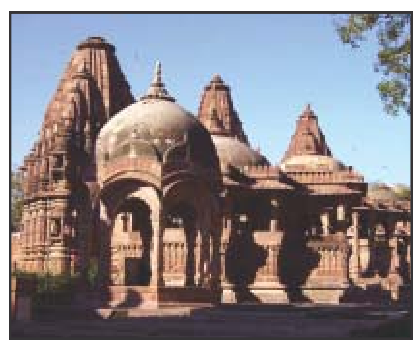

मंडोर की छतरियाँ

शब्दावली

ताड़पत्र	–	ताड़ के वृक्ष का पत्ता।
खरल	–	पत्थर की वह कुँड़ी जिसमें चीजें कुटी जाती हैं।
मकबरा	–	वह इमारत जिसमें किसी की कब्र हो।
प्राचीर	–	चारदीवारी।

अभ्यास प्रश्न

प्रश्न एक व दो के सही उत्तर कोष्ठक में लिखिए –

1. पटवों की हवेलियाँ हैं–
   (अ) जैसलमेर में (ब) जोधपुर में (स) जयपुर में (द) उदयपुर में ( )
2. देलवाड़ा के जैन मन्दिर हैं–
   (अ) सिरोही में (ब) जोधपुर में (स) जसपुर में (द) उदयपुर में ( )
3. स्तम्भ–अ को स्तम्भ–ब से सुमेलित कीजिए–

स्तम्भ–अ	स्तम्भ–ब
1. कुम्भलगढ़	झालावाड़
2. रणथम्भौर	जैसलमेर
3. सोनारगढ़	सवाईमाधोपुर
4. गागरोन	राजसमंद

4. परकोटा एवं प्राचीर क्या है ?
5. दुर्ग किसे कहते है ?
6. चित्तौड़गढ़ के किले का निर्माण किसने करवाया ?
7. चित्रशैली से क्या तात्पर्य है ?
8. पोथी चित्र शैली की क्या पहचान है ?
9. राजस्थान की मूर्तिकला की प्रसिद्ध प्रतिमाएँ कौन–कौन सी है ?
10. मारवाड़ के प्रमुख मन्दिर कौन–कौन से है ?
11. राजस्थानी चित्र शैली से क्या तात्पर्य है ?
12. राजस्थान में जैन मन्दिरों के किसी एक केन्द्र का विवरण लिखें।

गतिविधि–

1. राजस्थान के किलों की सूची बनाएँ ।
2. अपने आस–पास के मन्दिरों की सूची अपने गुरुजी और बड़ों की मदद से बनाएँ।
3. अपने आस–पास हवेलियों और छतरियों के चित्रों का संकलन कीजिए।
4. मध्यकालीन चित्रकला शैली आधारित कुछ चित्र बनाएँ।